Inspira- Journal of Modern Management & Entrepreneurship (JMME)
ISSN : 2231–167X, General Impact Factor : 2.5442, Volume 08, No. 04, October, 2018, pp. 337-344

लोक शक्ति एवं राज्य तथा गांधी दर्शन

डॉ. उमा शर्मा*

i:Lrkouk

महात्मा गांधी ने अपनी लोक शक्ति की अवधारणा को नैतिक शक्ति के साथ जोड़ा है। गांधी ने मुख्य रूप से लोक शक्ति के स्त्रोतों को बताने का प्रयास किया है, साथ ही उन्होंने शक्ति की तकनीक को खोजने का प्रयास भी किया है। महात्मा गांधी की दृढ़ आस्था थी कि ''शक्ति'' का स्वरूप दमनात्मक है और शक्ति का दमनात्मक स्वरूप उन्हें राज्य में दृष्टिगोचर हुआ। महात्मा गांधी ने ''राज्य–शक्ति'' को ''दमनात्मक'' एवं ''हिंसात्मक'' माना, जो कि व्यक्ति के नैतिक विकास में बाधक है। गांधी के समस्त विचार नैतिकता व अहिंसा पर आधारित हैं। अतः महात्मा गांधी राज्य में व्याप्त हिंसात्मक शक्ति का अंत कर उसे लोक शक्ति के धरातल पर प्रतिस्थापित करना चाहते थे। अतः यह अध्ययन किया गया कि महात्मा गांधी को राज्य में दमनात्मक एवं हिंसात्मक शक्ति के दर्शन क्यों हुए ? एवं किस प्रकार उन्होंने राज्य की दमनात्मक शक्ति का नैतिक शक्ति में रूपान्तरण किया ? साथ ही लोक शक्ति पर आधारित जन सम्प्रभुता को प्राप्त करना व्यक्तिगत अधिकार है। महात्मा गांधी ने सम्पूर्ण समाज को एकसूत्र में बांधन के लिए और लोक शक्ति को नया आयाम देने के लिए प्रयास तेज किए। प्रस्तुत अध्याय में गांधी दर्शन में राज्य शक्ति और लोक शक्ति पर विस्तृत अध्ययन किया गया है।

राज्य शक्ति का परम्परागत स्वरूप

परम्परागत समाज में शक्ति का स्वरूप राज्य तक सीमित एक साधन मात्र थी। महात्मा गांधी को राज्य शक्ति में हिंसात्मक शक्ति की धारा बहती हुई दृष्टिगोचर हुई। इस प्रकार उन्होंने राज्य को ''दमन'' व ''हिंसा'' पर आधारित माना क्योंकि दक्षिण अफ्रीका की श्वेत सरकार, अश्वेतों पर अमानुषिक अत्याचार करती थी। दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद नीति के गांधीजी स्वयं भी भुक्तभोगी थे। नेटाल की राजधानी मैरित्सबर्ग से प्रिटोरिया जाने हेतु गांधीजी ने पहले दर्जे का टिकट लिया, किन्तु रेल में एक ब्रिटिश अफसर था और उस अफसर ने गांधीजी को रेल के आखिरी डिब्बे में बैठने को कहा। गांधीजी ने पहले दर्जे के डिब्बे में से उतरने से इंकार कर दिया। इतने में एक सिपाही आया, उसने हाथ पकड़ा और धक्का मारकर मुझे नीचे गिरा दिया एवं मेरा सामान नीचे उतार दिया। अतः जीवन के इस कटु अनुभव ने उनके मानस–पटल पर यह बात अंकित कर दी कि राज्य की शक्ति दमनात्मक है।

महात्मा गांधी ने पश्चिमी राज्य की तीव्र निंदा की क्योंकि उसका आधार हिंसात्मक शक्ति था। इंग्लैण्ड की संसद जिसे हम संसदों की जननी मानते हैं उसकी तीव्र निंदा की है। उनके शब्दों में ''ब्रिटेन की संसद एक बांझ स्त्री और वैश्या है।'' गांधीजी ने ब्रिटिश संसद की तुलना बांझ स्त्री से की क्योंकि वह जनता की मांगो के अनुरूप कानून नहीं बनाती। संसद निवेश (Input) को निर्गत (Output) में रूपान्तरित नहीं करती। संसद को

* सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, सेन्ट सोल्जर कॉलेज फॉर गर्ल्स, जयपुर, राजस्थान।

वैश्या इसलिए कहा क्योंकि वह मंत्री मण्डल नहीं वरन् प्रधानमंत्री के हाथ में कठपुतली है। यहाँ गांधीजी का संकेत मंत्री मण्ड़ल की दमनात्मक शक्ति की ओर है। अतः गांधीजी की नैतिक शक्ति की कसौटी पर संसद खरी नहीं उतरती, इसलिए गांधीजी ने राज्य को शक्ति का प्रतीक माना।

गांधीजी के अनुसार ''राज्य केन्द्रित और संगठित रूप में हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति एक सचेतन एवं आत्मावान प्राणी है, किन्तु राज्य एक ऐसा आत्माविहीन यंत्र है, जिसे हिंसा से पृथक नहीं किया जा सकता क्योंकि उसका अस्तित्व ही हिंसा पर निर्भर करता है।'' गांधीजी राज्य शक्ति के विरोधी हो गए। वास्तव में ''राज्य के दमनात्मक स्वरूप के प्रति उनमें विकर्षण था।'' अतः उनके अनुसार राज्य एक आत्मा रहित भौतिक मशीन है, जो कि व्यक्ति के शोषण में सहायक है। आदर्शवादी विचारक टी.एच.ग्रीन ने राज्य का आधार व्यक्ति की इच्छा बताया जबकि महात्मा गांधी को राज्य की नींव में इच्छा के दर्शन होने के स्थान पर दमनात्मक तथा हिंसात्मक शक्ति के दर्शन हुए। जवाहरलाल नेहरू का भी यह मत था कि हिंसा अपने आप में बुरी है एवं आधुनिक राज्य और समाज व्यवस्था में हिंसा का रक्त विद्यमान है। लेकिन नेहरू कल्याणकारी राज्य के सिद्धान्त के प्रति निष्ठावान थे। अतः महात्मा गांधी ने राज्य शक्ति को दमनात्मक व हिंसात्मक माना।

- **''दमनात्मक शक्ति'' का ''नैतिक शक्ति'' में रूपान्तरण (राम राज्य)**

जिस प्रकार प्लेटो ने यूनान की तत्कालीन राज–व्यवस्था के दुर्गुणों को दूर करने हेतु रिपब्लिक में आदर्श राज्य का चित्रण किया, उसी प्रकार राष्ट्र पिता महात्मा गांधी ने राज्य की दमनात्मक तथा हिंसात्मक शक्ति से शुद्ध हो ऐसे राज्य की स्थापना का विचार प्रतिपादित किया, जो कि अहिंसक शक्ति या नैतिक शक्ति द्वारा संचालित हो। राज्य शक्ति में नैतिकता का समावेश कर देने से ''राम राज्य'' या अहिंसक राज्य का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने अहिंसक शक्ति को राजनीतिक संस्थाओं की सफलता की कसौटी का माध्यम माना।

- **''विकेन्द्रित शक्ति'' की गांधीवादी अवधारणा**

महात्मा गांधी ने यह अनुभव किया कि अत्यधिक ''केन्द्रीकृत व्यवस्था'' का स्वभाव ''शक्ति'' तथा ''हिंसा'' है। महात्मा गांधी की आस्था थी कि ''शक्ति का विकेन्द्रीकरण'' कर ही लोकतंत्र को वास्तविक अर्थो में फलीभूत किया जा सकता है। इस प्रकार उन्होंने पंचायती राज की अवधारणा प्रतिपादित की, जो कि शक्ति के विकेन्द्रीकरण पर आधारित है। ''पंचायती राज'' की अवधारणा का स्त्रोत प्राचीन भारतीय शासन है। प्राचीन काल में ''ग्राम पंचायते'' शक्ति का स्त्रोत थी जब शासन की इकाइयों में सबसे निम्न स्तर होते हुए भी गांव में लोकतांत्रिक पद्धति के माध्यम से ही राजा शासन करता था। नगरों व राजधानियों में भी जनप्रतिनिधियों के माध्यम से शासन कार्य चलता था। अतः यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया कि किस प्रकार प्राचीन काल में पंचायतों के हाथों में ''शक्ति'' थी और धीरे–धीरे पंचायतों की ''शक्ति'' कैसे लुप्त हो गई।

प्राचीन काल में ''राज्य–शक्ति'' की अवधारणा

भारत गांवों का देश है। ''पंचायती–राज'' की कल्पना भारतीय संस्कृति एवं भारतीय राज–व्यवस्था की आधारशिला है। प्राचीन भारत में ''शक्ति'' ''ग्राम–पंचायतो'' के हाथों में थी। डॉ. राधा मुकुंद मुकर्जी के अनुसार ''स्थानीय स्वायत्त शासन के स्वतंत्र विकास के फलस्वरूप देश को कछुए की खोल की भांति सुरक्षित, शांति का एक स्वर्णित स्थान प्राप्त हुआ। जहां राष्ट्र की संस्कृति अपनी सुरक्षा लेती थी, जब देश के राजनीतिक गगन पर तूफान फूट पड़ता था।'' अतः पंचायतों की परम्परा सदियो पुरानी है। प्राचीन काल में ग्राम पंचायतें सशक्त एवं सुदृढ़ थी एवं सामान्य प्रशासन उनके हाथ में होता था।

मध्यकाल में ''राज्य–शक्ति'' की अवधारणा

मध्यकाल में जिन मुस्लिम राजाओं ने भारत पर आधिपत्य जमाया, उन्होंने ''पंचायत–व्यवस्था'' पर किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया। मुगलों ने भी गांव की इस व्यवस्था को अक्षुण्ण रखा, मध्य काल में धीरे–धीरे ग्राम–पंचायत व्यवस्था में टूटना आरम्भ हुई और ब्रिटिश काल तक आते–आते समाप्त हो गई।

भारत में ब्रिटिश शासन काल में शक्ति की अवधारणा

भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना से ग्राम–पंचायतों की ''शक्ति का ह्रास'' का युग प्रारम्भ हुआ। डॉ. अल्केतर ने ठीक ही कहा कि ''अंग्रेजी विदेशी शासकों ने ग्राम–पंचायतों की इस प्राचीन परम्परा को ध्वस्त कर हमारे देश के प्रति सर्वाधिक घातक कुकृत्य किया।'' अतः शक्ति की प्राचीन ईकाई, ग्राम–पंचायतों की शक्ति पर अंग्रेजों ने प्रहार किया।

''राज्य–शक्ति'' की गांधीवादी अवधारणा

आजादी के पश्चात् महात्मा गांधी ने अपनी आंखों से अवलोकन किया कि सरकार आम जनता के कल्याण में सहायक न होकर विकास, उन्नति के मार्ग में बाधक शोषण तथा दमन के हथियार तथा उस पर आंतक जमाने के साधन बन गए हैं। अतः महात्मा गांधी ने स्पष्ट किया कि गांवों का शोषण स्वंय एक संगठित हिंसा है, यदि हमें स्वराज्य की रचना अहिंसा के आधार पर करनी है, तो गांवों को उनका उचित स्थान देना ही होगा। अतः राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने पंचायतों को पुर्नजीवित किए जाने की आवश्यकता पर जोर दिया, क्योंकि उनकी आस्था थी कि शक्ति के विकेन्द्रीकरण अर्थात् पंचायती राज की स्थापना करके ही राज्य की दमनात्मक शक्ति को नैतिक शक्ति में रूपान्तरित किया जाना संभव है।

राजनीतिक शक्ति का विकेन्द्रीकरण

महात्मा गांधी राजनीति में छल, कपट के स्थान पर नैतिक मूल्यों का समावेश करना चाहते थे। वे राज्य को नैतिक शक्ति के धरातल पर प्रतिस्थापित करना चाहते थे। महात्मा गांधी का दृढ विश्वास था कि शक्ति के विकेन्द्रीकरण द्वारा ही लोकतंत्र के मूलभूत आदर्शो को अर्जित किया जा सकता है। उनके शब्दो में ''यदि भारत को अपना विकास अहिंसा की दिशा में करना है तो उसे बहुत सी चीजों का विकेन्द्रीकरण करना पड़ेगा। केन्द्रीकरण किया जाए तो फिर उसे कायम रखने के लिए और उसकी रक्षा के लिए हिंसा बल अनिवार्य है।'' महात्मा गांधी के विचारों से स्पष्ट होता है कि केन्द्रीकृत शक्ति हिंसा पर आधारित होती है।

पंचायती राज

पंचायती राज की गांधीवादी अवधारणा शक्तियों के विकेन्द्रीकरण पर आधारित है। महात्मा गांधी ने केन्द्रीकृत राज्य–शक्ति के स्थान पर विकेन्द्रीकृत राज्य–शक्ति की अवधारणा प्रतिपादित की। उनका विश्वास था कि ग्राम स्वराज्य द्वारा ही राज्य की हिंसक व दमनात्मक शक्ति का अंत किया जा सकता है। ''ग्राम–स्वराज्य'' में राज्य का अंत नहीं होता परन्तु राज्य का विकेन्द्रीकरण होता है।

इस प्रकार महात्मा गांधी ने शक्ति के विकेन्द्रीकरण पर आधारित पंचायती राज की संरचना का सुझाव दिया। मेरी कल्पना का स्वराज्य तब आएगा जब हमारे मन में यह बात अच्छी तरह जम जाए कि हमें अपना स्वराज्य सत्य और अहिंसा के शुद्ध साधनों द्वारा ही प्राप्त करना है, उन्हीं के द्वारा हमें उसका संचालन करना है एवं उन्हीं के द्वारा हमें उसे कायम रखना है। अतः गांधीजी के विचारों में यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि पंचायती राज का संगठन एवं कार्य प्रणाली के अंतर्गत नैतिक शक्ति को आधार माना है उनके अनुसार ग्राम का शासन चलाने के लिए हर साल गांव के पांच व्यक्तियों की एक पंचायत का निर्वाचन होगा।

आर्थिक विषमता का हल :'नैतिक शक्ति' द्वारा

साम्यवादियों का मूल मंत्र हिंसक शक्ति है, जबकि महात्मा गांधी की शक्ति का मूल तत्व नैतिकता है। अतः गांधी जी ने अहिंसक शक्ति या नैतिक शक्ति द्वारा आर्थिक विषमताओं को दूर करने हेतु 'ट्रस्टीशिप'के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ट्रस्टीशिप की अवधारणा एक पुरातन अवधारणा है। गांधी जी ने यह विचार कानूनों की पुस्तकों से प्राप्त किया। गांधी जी ने 'ट्रस्टीशिप का जो विचार प्रतिपादित किया वह है, ''अपनी सम्पत्ति का त्याग कर, तू उसे भोग, इसे जरा विस्तार से समझाकर कहे तो 'यह कहूंगा कि तू करोडों खुशी से कमा, लेकिन समझ ले कि तेरा धन सिर्फ तेरा नहीं, सारी दुनिया का है, इसलिये जितनी तेरी सच्ची जरूरत हो

उतनी पूरी करने के बाद जो बचे उसका उपयोग तू समाज के लिये करे।'' गांधी जी के अनुसार आर्थिक दुर्गुणों का उपचार राजकीय पुंजीवाद नहीं है। उसका विश्वास है कि सम्पत्ति के निजी अधिकार में जो हिंसा है वह राज्य की हिंसा से कम हानिकारक है। प्यारे लाल, किशोरी लाल तथा नरहरि भाई ने 'संरक्षकता' का एक सीधा सादा और व्यवहारिक फार्मूला गांधी के सामने रखा। गांधी जी ने उसमें थोडे बहुत परिवर्तन किये। अंतिम मसौदा इस प्रकार थाः–

- 'संरक्षकता' (ट्रस्टीशिप) ऐसा साधन प्रदान करती है जिससे समाज की पूंजीवादी व्यवस्था, 'समतावादी' व्यवस्था में परिणित हो जाती है। यह उस विश्वास पर आधारित है कि मानवीय प्रकृति में सुधार सम्भव है।
- वह सम्पत्ति के व्यक्तिगत स्वामित्व का कोई अधिकार स्वीकार नहीं करती, हॉ उसमें समाज स्वयं अपनी भलाई के लिये किसी हद तक इसकी इजाजत दे सकता है।
- इसमें धन के स्वामित्व और उपयोग के कानूनी नियमन का निषेध नहीं है।
- इस प्रकार राज्य द्वारा संरक्षकता में कोई भी व्यक्ति अपनी स्वार्थसिद्धी के लिये या समाज के हित के विरूद्ध सम्पत्ति का अधिकार रखने या उसका उपयोग करने में स्वतंत्र नहीं होगा।
- जिस प्रकार से न्यूनतम पारिश्रमिक निर्धारित करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाता है उसी प्रकार से व्यक्ति की अधिकतम आय की सीमा भी निश्चित की जाएगी। ऐसी न्यूनतम एवं अधिकतम आय का अंतर विवेक–संगत, समता–परक एवं समय–समय पर परिवर्तनशीन होगा, ताकि आय के अन्तर को कम से कम करने की प्रवृति बनी रहे।
- गांधीवादी आर्थिक व्यवस्था के अन्तर्गत उत्पादन की प्रकृति सामाजिक आवश्यकता द्वारा निर्धारित की जाएगी, ना कि व्यक्तिगत लाभ या ईच्छा के द्वारा। अतः गांधी जी ने सम्पत्ति रूपी भौतिकवादी राक्षस का खण्डन किया है। उनके अनुसार व्यक्ति की निजी सम्पत्ति प्राप्त करने की लालसा शैतान के समान है। उन्होंन धन के उचित विनियमन तथा निरपेक्ष सामाजिक न्याय का विचार प्रस्तुत किया।

'आर्थिक शक्ति' के विकेद्रीकरण की गांधीवादी अवधारणा में 'खादी' का मुख्य स्थान है। चरखे से कताई के पक्ष में गांधी जी ने निम्न तर्क प्रस्तुत किये हैं :–

- जिन लोगों को समय है और जिन्हें थोड़े से पैसो की भी जरूरत है उन्हें इससे आसानी से रोजगार मिल सकता है।
- इसका हजारों को ज्ञान है।
- यह आसानी से सीखी जाती है।
- इसमें लगभग कुछ भी पूंजी लगाने की आवश्यकता नहीं होती।
- चरखा आसानी से और सस्ते दामों में तैयार किया जा सकता है। हममें से अधिकांश को अभी तक यह मालूम नहीं है कि कताई एक ढीकरी और बास की खपच्ची से यानी तकली पर भी की जा सकती है।
- इससे अकाल के समय तत्काल राहत मिल जाती है।
- विदेशी कपडा खरीदने से भारत का जो धन बाहर जा रहा है उसे यही रोक सकती है।
- इससे करोडो रूपयों की जो बचत होती है, वह अपने आप गरीबों में बट जाती है।
- लोगों में सहयोग उत्पन्न करने का यह अत्यन्त प्रबल साधन है। अतः गांधी जी का विश्वास था कि जनउत्थान के लिये सूत कातना आवश्य है। वह 'चरखे' को एक 'दैवीय उपकरण' मानते थे क्योंकि यह मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, आर्थिक स्त्रोतो में वृद्धि होती है और उत्पादन का केन्द्रीकरण होता है।

गांधीजी के अनुसार ''मेरा पक्का विश्वास है कि हाथ–कताई और हाथ–बुनाई के पुररूज्जीवन से भारत के आर्थिक और नैतिक पुनरूत्थान में सबसे बडी मदद मिलेगी। करोडो आदमियों की खेती की आय में वृद्धि करने के लिये कोई सादा उद्योग चाहिये। बरसों पहले वह गृहउद्योग कताई का था, और करोड़ो को भूख से बचाने का रहा हो, तो उन्हें इस योग्य बनाना पड़ेगा कि वे अपने घरों में फिर से कताई जारी कर सकें और हर

गांव को अपना बुनकर फिर से मिल जाये।''[52] अतः गांधीजी स्वावलम्बन और सादे जीवन पर बल देते हैं। उनका दृढ विश्वास था कि सभी बुराईयों की जड़ बेकारी है और सूत कातने से अनेक व्यक्तियों को रोजगार मिल सकता है। इस प्रकार गांधीजी चरखा कताई को एक आर्थिक ही नहीं अपितु राजनीतिक व नैतिक अवधारणा भी मानते थे।

नकारात्मक राज्य–शक्ति

वर्तमान समय में सबसे अधिक चिन्ता की बात यह है कि जिस राज्य–शक्ति को नागरिक वोट देकर बनाता है, वोट देकर चलाता है आज जिससे वह शांति, सुरक्षा और कल्याण की अपेक्षा रखता है, उस राज्य–शक्ति की आज यह स्थिति है। इतना ही नहीं आज राज्य–शक्ति इनको रोक नहीं पा रही है, अपितु भ्रष्टाचार को बढावा मिल रहा है। पुलिस, कानून, न्याय, आर्थिक नीति–रीति, विकास, शिक्षा काराजनीति में क्या हो रहा है? कौन नहीं जानता कि अक्सर पुलिस और अपराधकर्मियों का गठबंधन रहता है। इस गठबंधन में नेताओं के मिल जाने से हिंसा की त्रिवेणी बन गयी है, इस त्रिवेणी में स्नान करने वाले खुलकर कानून की अवज्ञाकर रहे हैं। राज्य–शक्ति ने हिंसक–शक्ति का रूप धारण कर लिया है।

लोक शक्ति पर आधारित जनतांत्रिक व्यवस्था

गांधीजी पश्चिम उदारवादी जनतांत्रिक राज्यों के आलोचक थे। क्योंकि प्रजातंत्र में नैतिक शक्ति का अभाव है। ये प्रजातंत्र साम्राज्यवादी है तथा पूंजीवादी व्यवस्था के माध्यम से दूसरे लोगों का शोषण करते है। वहां के राज्य में बहुसंख्यक दल की निरंकुशता है और इस बहुसंख्यक दल पर संसद की निरंकुशता है इसलिये ब्रिटेन व अन्य राज्यों में प्रजा का राज्य नहीं, एक वर्ग विशेष का राज्य है। उनका कहना था कि यूरोप के लोगों के पास सत्ता है, किन्तु उनके पास स्वराज्य नहीं। अतः गांधीजी के अनुसार जनतंत्रात्मक शासन वास्तव में नैतिक शक्ति पर आधारित शासन नहीं है। क्योंकि पश्चिम में जनता पर आधारित, जनता द्वारा सरकार नहीं वरन वहां तो मंत्रीमण्डल की तानाशाही है। रंगभेद, साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद द्वारा जनता का शोषण किया जाता है। इस प्रकार का राज्य गांधीजी के विचारों में हिंसक शक्ति का राज्य है।

शक्ति पर आधारित न्यायिक व्यवस्था

महात्मा गांधी ने न्यायिक प्रक्रिया को आंशिक रूप में स्वीकार किया। किन्तु उन्होंने ग्राम पंचायतों द्वारा न्यायिक कार्य किये जाने पर जोर दिया। उन्होंने न्यायधीशों तथा वकीलों की कटु निन्दा की। वकील का स्वार्थ झगड़ा बढ़ाने में है कानून वे बनाते है, उसकी प्रशंसा वे ही करते है, लोगों से क्या दाम मिल जाय यह भी वे ही तय करते है और जनता पर प्रभाव स्थापित करने के लिए आडम्बर ऐसा करते हैं, मानों वे आसमान से उतर आये देवदूत हो। गांधीजी ने वकीलों को स्वार्थी इसलिये बताया क्योंकि वे अधिक धन के लालच में झगड़ों के समाधान के स्थान पर उन्हें और अधिक बढ़ावा देते हैं। ''जो शब्द में वकीलों के लिए प्रयोग करता हूँ वे ही शब्द जजों पर भी लागू होते हैं। ये दोनों भाई हैं एवं एक–दूसरे को बल देने वाले हैं।'' महात्मा गांधी ने वकीलों के साथ–साथ न्यायाधीसों पर भी कटु प्रहार किये क्योंकि ये दोनों ही झगडों को बढ़ावा देकर अपनी–अपनी जेब भरने का कार्य करते हैं। अतः गांधीजी ने 'रामराज्य' की न्यायिक व्यवस्था में नैतिकता का समावेश करने की ओर ध्यान आकर्षित किया।उनका विचार था कि न्याय कार्य में पंचायतों की भूमिका होनी चाहिये। क्योंकि पंचायतों द्वारा न्यायिक कार्य किये जाने से गरीब से गरीब व्यक्ति को भी शीघ्र न्याय प्राप्त हो सकता है। गांधीजी का मत था कि दीवानी मुकदमों में दोनों पक्षों को न्यायाधिकरण के लिए छोड देना चाहिये एव बीच वाले न्यायालयों की बहुलता और केस लॉ को समाप्त कर देना चाहिये।

अधिकार व कर्तव्य

महात्मा गांधी ने 'अहिंसक शक्ति प्रधान राज्य' में अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों पर अधिक बल दिया है। उनका विचार है कि अधिकार राज्य द्वारा प्रदत्त नहीं होते वरन राज्य तो उन्हें मान्यता प्रदान करते हैं एवं मानव अपूर्णताओं और दुर्बलताओं को देखते हुए अधिकारों को राज्य का संरक्षण मिलना चाहिये। गांधीजी का दक्षिणी

अफ्रीका में 'सत्याग्रह' का नेतृत्व प्रमुख रूप से राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए था। गांधीजी ने अधिकारों की स्थिति को व्यक्ति की क्षमता के अनुसार निर्धारित करने पर बल दिया। श्रमिकों तथा किसानों को न्यूनतम आर्थिक वेतन के अधिकार की स्वीकृति दी। उन्होंने रोजगार के अधिकार को जीवन के साथ जोड़ दिया हैं। राज्य का यह कर्तव्य है कि वह सबकों रोजगार की सुविधा उपलब्ध करायें। जर्मन दार्शनिक कांट ने भी कर्तव्य के रूप में अर्थात बिना फल की आशा किये 'नैतिक सिद्धान्त' का प्रतिपादन किया। इस प्रकार गांधीजी के राजनैतिक अधिकारों का आधार 'नैतिक' है।

महात्मा गांधी के शक्ति सम्बन्धी विचार अप्रासंगिक

आलोचकों का मत है कि महात्मा गांधी के 'शक्ति सम्बन्धी' विचार समयानुकल नहीं है। इनमें संशोधन करने की आवश्यकता है। आलोचकों का मत है कि राज्य केवल 'शक्ति पुंज' ही नहीं है। राज्य एक आवश्यक संस्था है, जिसके बिना समाज व व्यक्ति का अस्तित्व संभव नहीं है। आज राज्य ने लोक कल्याणकारी राज्य का रूप ले लिया है। अतः राज्य शक्ति को पूर्ण रूप से 'हिंसात्मक' व 'दमनात्मक' नहीं कहा जा सकता।

इसी प्रकार अनेक विद्वानों व आलोचकों ने गांधीजी के 'नैतिक शक्ति' पर आधारित राज्य की अवधारणा पर भी कटु प्रहार किया। आलोचकों की धारणा है कि 'राम राज्य' तो 'युटोपिया' है यह तो केवल स्वर्ग में ही संभव है। यह कैसे सम्भव है कि पुलिस और सेना भी अहिंसा का पालन करे, ऐसे में गांधीजी के राज्य की दशा हॉब्स की प्राकृतिक दशा जैसी होगी। क्योंकि गांधीजी ने मानव प्रकृति के केवल अच्छे पहलु को देखा, उसका स्वार्थी और ईष्यालु भावनाओं के प्रति दृष्टिपात नहीं किया। इस प्रकार आलोचकों द्वारा महात्मा गांधी की 'नैतिक शक्ति' को अप्रासंगिक बताया जा रहा है।

गांधीवादी शक्ति–अवधारणा प्रासंगिक

महात्मा गांधी ने शक्ति विषयक अवधारणा में 'शक्ति में नैतिकता एवं जनसहमति का पुट डाला अतः और ऐसे राज्यों को 'अहिंसक शक्ति' प्रधान राज्य व 'राम राज्य की संज्ञा दी इस प्रकार के राज्य में जनतांत्रिक व्यवस्था 'नैतिक शक्ति' पर आधारित है। उनका यह विचार आधुनिक समय में प्रासंगिक प्रतीत होता है। कहने को भारत दुनिया का सबसे बडा लोकतंत्र कहा जाता है, किन्तु लोगों की प्रभुसत्ता यहां केवल संविधान की पंक्तियों में अंकित है। आज राज्य में व्यक्ति का स्थान प्रथम नहीं है। आज हमारे देश की असली समस्या नैतिक संकट की है। देश का चरित्र बल और नैतिक बल शिथिल हो गया। आज भ्रष्टाचार का बोलबाला है। चुनावों में अनुचित साधनों द्वारा मत प्राप्त करने का कार्य किया जाता है। धन पर आधारित आज की चुनाव पद्धति कभी सच्चे लोकतंत्र को प्रतिष्ठित नहीं कर सकती। यह देश के नेतृत्व की ही बात नहीं है, आम जनता की भी बात यही है, अन्यथा कोई कारण नहीं है कि अपने संकीर्ण राजनीतिक स्वार्थों को प्राथमिकता देने वालों की चालों में जनता भी सम्मिलित हो। चुनावों के समय जितना भ्रष्टाचार होता है वह चरित्रवान जनमत के होते हुए कैसे संभव हो सकता है।

अतः गांधीजी द्वारा प्रतिपादित राज्य शक्ति को नैतिकता, जनसहमति पर आधारित करने पर ही हम जनतंत्र के मूलभूत आदर्शों, समानता, स्वतंत्रता व भ्रातृत्व को प्राप्त कर सकते हैं। शासन शक्ति में व्यक्ति की पूर्ण सहभागिता होनी चाहिए। अल्पसंख्यकों के विचारों को पूर्ण सम्मान देकर ही लोकतंत्र के आदर्श को प्राप्त कर सकेंगे। मताधिकार की योग्यता शारीरिक श्रम होने से व्यक्ति स्वाबलंबी बन सकेंगे एवं अपने मत का सही प्रयोग कर सकेंगे। निष्पक्ष प्रेस से जनता की मांगे सरकार तक पहुंचेगी एवं सरकार की नीतियों से जनताभी अवगत हो सकेंगी। स्वस्थ जनमत भी जनतंत्र की आवश्यक शर्त है।

इसी प्रकार गांधीजी ने पुलिस, जेल व न्यायिक व्यवस्था को भी अहिंसक शक्ति द्वारा संचालित करने पर बल दिया। उनके उपरोक्त विचारों की प्रासंगिकता में कोई संदेह उत्पन्न नहीं होता कि अधिकांशतः पुलिस जनता की स्वामी बन गई है। पुलिस जिसका कार्य नागरिकों की सुरक्षा करना है वह आज भ्रष्टाचार में लिप्त है। सामाजिक अन्याय व अत्याचार, कानून और व्यवस्था की करीब करीब समाप्ति, भ्रष्टाचार की पराकाष्ठा,

स्त्रियों पर बलात्कार तथा हरिजनों, आदिवासियों और अन्य कमजोर वर्गों पर जुल्म के कारण आज घुटन का अनुभव हो रहा है। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि पुलिस कर्मचारियों को जनता के मालिक नहीं वरन् सेवक बनाए जाए। गांधीजी द्वारा सुझाए गए पुलिस व्यवस्था का 'अहिंसक शक्ति' द्वारा संचालन करने पर ही नागरिकों की सुरक्षा संभव है। इसी प्रकार गांधीजी के जेलों के सुधार के संबंध में उपरोक्त विचार भी प्रासंगिक प्रतीत होते है। अपराध के कारणों का पता लगा कर ही अपराधों की रोकथाम संभव हो सकती है एवं अपराधी को मानव बनाया जा सकता है। वर्तमान समय में जेलों में अपराधियों का व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जा रहा है। बीकानेर की जेल में अपराधियों को गलीचा बनाना सिखाया जाता है, जो कि महात्मा गांधी की प्रासंगिकता को प्रमाणित करता है।

आज पृथ्वी को विभिन्न सरकारों ने अस्त्र–शस्त्रों से ढ़क दिया है। यही नहीं आकाश को भी अस्त्र–शस्त्र से ढ़कने का कार्य शुरू तो हो गया है। उस पृथ्वी पर और उस आकाश के नीचे बसने वाले मनुष्य जाति हर प्रकार की हिंसा से घिरा हुआ जीवन बिता रही है। हिंसा, बर्बादी, विकट समस्याएं, परमाणु विनाश का खतरा और आर्थिक संकटों से त्रस्त कई देशों के नेताओं को अब अहसास हो गया है कि इन तमाम प्रश्नों का समाधान गांधीजी के सत्य और अहिंसा के आदर्शो में है। पाश्चात्य लोग भी वर्तमान जीवन संघर्ष से परेशान हो गये हैं और गांधीजी के सिद्धान्तों को अपनाना चाह रहे हैं।

अतः शक्ति के कन्द्रीकरण वाली शासन पद्धति, जिसकी स्थापना अंग्रेजों ने शोषण के लिए समाज में की थी, चलती रहेगी, तब तक चाहे उसे पं. जवाहरलाल नेहरू चलाये, जयप्रकाश नारायण चलाये, श्रीमती इन्दिरा गांधी चलाये, श्री राजीव गांधी चलाये, या स्वयं गांधीजी फिर से जन्म लेकर चलाये, तो राज्य में शोषण होता ही रहेगा। भगवान रामचन्द्र वानर सेनाओं की सहायता से सीता का उद्धार कर वापस अयोध्या ले जाये, उसी तरह अंग्रेजों ने भी भारत की राजगद्दी का अपहरण कर उसे इंग्लैण्ड में रोके रखा था। महात्मा गांधी ने हम लोगों जैसी वानर सेनाओं की सहायता लेकर इंग्लैण्ड से देश की राजद्दी का उद्धार किया और उसे अयोध्या यानी देश के सात लाख गांवों की ओर ला रहे थे, किन्तु वे दिल्ली तक ही ला पाये थे कि इतने में वह चल बसे और सिंहासन वहीं पर आकर अटक गया। अतः राज्य की दमनात्मक शक्ति से मुक्ति हेतु 'पंचायत राज' की स्थापना करनी होगी। आज हमें महात्मा गांधी के उपरोक्त विचारों में प्रासंगिकता की झलक दिखायी दे रही है।

सन्दर्भ सूची

1. गांधीजी, संक्षिप्त आत्मकथा, पृ.38
2. सीतारमैया, पट्टाभि, कांग्रेस का इतिहास, पृ.152
3. प्रसाद, देवी, गांधीजी और आजादी के लिए सशस्त्र संग्राम, गांधी मार्ग (मासिक पत्रिका), वर्ष 30, अंक 15, दिसम्बर 1985, पृ.21
4. डॉ. सिंह, रामजी, दिल्ली की पंचायत, गांधी मार्ग (मासिक पत्रिका) वर्ष 34, अंक 4 अगस्त, 1989, पृ.25
5. तैतिरीय ब्राह्मण 2.9.3. 2, अर्थवेद 3.3.5 और अर्थवेद 9.8.9.
6. ये मं सनाभिरूत वान्यनाभिर्मेम प्राचत् पौरूषेयों वधोयः। अथर्ववेद 9.30.9.
7. त्वा विशो वृणुतां राज्याय त्वाभिक्मः प्रदिशः पंचदेवी। वर्म्मन राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्वततों न उग्रा विभजो वसूभिः अर्थर्ववेद 3.4.2.
8. सिंह, रामजी, दिल्ली की पंचायत, गांधी मार्ग (मासिक पत्रिका) वर्ष – 34, अंक 4 अगस्त 1989, पृ.25
9. माधुर, वाई.बी. गांवों की हालत, पृ.83
10. मजूमदार, धीरेन्द्र, क्रांति बनाम स्वदेशी राज, पृ.19
11. भारती, जे आर, गांधीजी के रामराज्य की प्रासंगिकता, खादी ग्रामोद्योग ग्रामीण अर्थ विषयक पत्रिका, (मासिक), वर्ष 36, अंक 5 फरवरी, 1990, पृ.232
12. कृपलानी, जीवतराम भगवानदास, महात्मा गांधी–जीवन और चिन्तन, पृ.406

13. गांधीजी, अंहिसक समाजवाद की ओर, पृ.26
14. गांधीजी, हरिजन सेवक, 1.2.1942
15. गांधीजी, हरिजन सेवक, 25.10.1952, मेरे सपनों के भारत से उद्धृत
16. तेन्दुलकर डी.जी., महात्मा (प्रथम भाग) पृ.157
17. मशरूवाला, किशोरीलाल, गांधी–विचार दोहन, पृ.76
18. ट्र्वडस न्यू होराइजन्स, 1959, पृ.200, ग्राम स्वराज्य, पृ.246 से उद्धृत
19. वर्मा, वी.पी. दि पॉलिटिकल फिलासफी ऑफ गांधी एण्ड सर्वोदय, पृ.230
20. सिंह, महीप, 'उल्टी गंगा को थामने की कोशिश' गांधी मार्ग (मासिक पत्रिका) वर्ष 27, अंक फरवरी 1982, पृ.10
21. लोढा, गुमानमल, लोक अदालत संगठन एवं कार्य पद्धति का अध्ययन, पृ.124
22. प्रसाद, अवध, लोक–अदालत–संगठन एवं कार्य पद्धति का अध्ययन, पृ.124
23. पटवारी, प्रभुदास, फिर गांधी की जरूरत है, गांधी मार्ग (मासिक पत्रिका) वर्ष 26, अंक 7, जुलाई, 1981, पृ.32–33
24. मिश्रा, डी.के., गांधी एण्ड सोशल आर्डर के. अन्तर्गत वी.पी. रमनमूर्ति– शस्त्रों की दौड़ और विश्व शांति सम्बन्धी गांधीजी के विचार, पृ.66

♦❐♦